पाकिस्तानका अिस्लामी गणतंत्र

रजि० नं० बी ४४४८
लॉअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १७ | सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी | अंक ४०

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० ५ दिसम्बर, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

युद्ध और विज्ञान

नीचेका समाचार ता० ६-१०-'५३ के 'नेशनल हेराल्ड' से दिया गया है :

"पेरिस, ५ अक्तूबर — फ्रेंच पदार्थविज्ञान-शास्त्री प्रो० फ्रेडरिक जोलियट क्यूरीने कल रातको कहा कि अगर नया विश्वयुद्ध छिड़ा, तो अुसका नतीजा ज्यादातर फ्रेंच लोगोंके लिअे भयंकर मौत ही होगा।

फ्रेन्च पीस मुव्हमेन्ट (फ्रांसीसी शांति-आन्दोलन) की राष्ट्रीय परिषद्की बैठकमें भाषण देते हुअे प्रो० क्यूरीने कहा कि अगर विश्वमें फिरसे संघर्ष छिड़ा, तो व्यूह-रचनाकी दृष्टिसे फ्रांसको ही सबसे पहले नये हथियारोंका लक्ष्य बनाया जायगा।

अुन्होंने कहा कि पिछले अनेक वर्षोंमें जिन अणुबम और हाअिड्रोजन बमोंका अुत्पादन और विकास किया गया है, अुनकी संहारक शक्ति हिरोशिमा और नागासाकी पर डाले गये अणुबमों, नेपाम बमों और कोरिया, चीन तथा मलायामें आजमाये गये जन्तु-युद्धकी संहारक शक्तिसे कहीं ज्यादा है।

प्रो० क्यूरीने, जो विश्व-शांति-परिषद्के अध्यक्ष हैं, कहा कि हाअिड्रोजन बम, जिनकी संहारक शक्ति 'नारकीय ढंगसे' बढ़ाअी जा सकती है, अिस धरती पर संपूर्ण जीवनको असंभव बना सकते हैं। 'आज जब कोअी विश्वयुद्धकी बात करता है, तो अुसके भीतर यह गंभीर अर्थ छिपा होता है।'

प्रो० क्यूरीने कहा, 'वैज्ञानिकोंका यह फर्ज है कि वे अिन भयंकर खतरोंसे लोगोंको सही तौर पर परिचित करें और अुन लोगोंकी पहली कतारमें खड़े हों, जो अैसे खतरोंका दुनियासे हमेशाके लिअे अन्त करनेका दृढ़ निश्चय कर चुके हैं।

'वैज्ञानिक लोग जानते हैं कि विज्ञानने मनुष्य-जातिको क्या क्या लाभ पहुंचाया है। वे यह भी जानते हैं कि विज्ञान अब शांतिको चाहनेवाली दुनियाको कितना लाभ पहुंचा सकता है। वे अब यह सुनना नहीं चाहते कि विज्ञान अणुबम और हाअिड्रोजन बमके जरिये हमें सर्वनाशकी ओर ले जा रहा है।

'वैज्ञानिक अिस बातको जानते हैं कि विज्ञानको अिसके लिअे दोषी नहीं ठहराया जा सकता। दोषी कुछ अैसे लोग हैं, जो विज्ञानके नतीजोंका दुरुपयोग करते हैं।'"
— यू० पी० आअी०-अे० अेफ० पी०

प्रो० क्यूरी वैज्ञानिकोंको अिस दोषसे अलग क्यों रखते हैं और अिस तरह अुन्हें युद्धका अन्त करनेकी संयुक्त जिम्मेदारीसे मुक्त क्यों करते हैं? क्या वैज्ञानिकों या विज्ञान पर अिसका दोष नहीं लगाया जा सकता? वैज्ञानिक अणुबम या हाअिड्रोजन बम जैसी चीजोंकी शोधमें अपनी बुद्धि और प्रतिभाका अुपयोग क्यों होने देते हैं, जिनका 'नारकीय ढंगसे' मानव संहार करनेके सिवा दूसरा कोअी अुपयोग नहीं है? जो लोग विज्ञानके अैसे 'नारकीय' परिणामोंका अुपयोग करते हैं वे बेशक दोषी हैं। लेकिन क्या वैज्ञानिक अिस विषयमें बिलकुल निर्दोष माने जा सकते हैं?

हमारे अपने देशमें वैज्ञानिकोंसे अैसा नहीं कहा जाता कि वे अपनी प्रतिभाका अुपयोग युद्धके 'नारकीय' शस्त्रास्त्रोंका आविष्कार करनेमें करें; कहा जाता है कि अुनका काम यह पता लगानेका है कि अणुशक्तिका अुपयोग शांतिपूर्ण और आर्थिक लाभोंके लिअे कैसे किया जा सकता है। अुनसे कृत्रिम खाद्य पदार्थ और दूसरी अैसी चीजें तैयार करनेके लिअे कहा जाता है, जिनका हमारी संपूर्ण प्रजाके कल्याण, पूरे काम और सुखकी दृष्टिसे लाभदायी सिद्ध होना शंकाका विषय है। ये सब अैसी समाज-रचनाके आदर्शकी सिद्धिमें योग देनेवाली हैं, जिसे आम तौर पर अुद्योग-वाद कहा जाता है। पश्चिमके लोग भी अिस चीजको दिनोंदिन ज्यादा महसूस करने लगे हैं कि युद्ध और घातक होड़, गरीबी और शोषण, अुपनिवेशवाद और जागतिक स्तर पर संहार — ये सब बातें औद्योगिक रचनामें स्वभावतः समाअी हुअी हैं। अिस स्थितिको जन्म देनेके लिअे विज्ञान ही जिम्मेदार है। अिसलिअे क्या वह अूपर अुठाये गये नैतिक प्रश्नसे अपनेको बरी मान सकता है?

अगर दुनियाको आगे बढ़ना है और युद्ध, दुःख-दर्द और नतिक ह्रासके दलदलसे बाहर निकलना है, जिसमें वह तथाकथित वज्ञानिक प्रगति और बुद्धिवादकी पिछली कुछ शताब्दियोंमें फंस गअी है, तो अुसे अपनी विज्ञानकी खोजोंके गुण-दोषोंकी जांच शुरू कर देनी चाहिये — अुसे अिसकी परीक्षा करनी चाहिये कि वज्ञानिक अनुसंधानकी प्रवृत्ति, जैसा कि हमें आज तक विश्वास करनेको कहा गया है, क्या अैसी शुद्ध प्रवृत्ति है, जिसका कोअी नैतिक अर्थ या महत्त्व नहीं है। रूसके महान द्रष्टा टॉल्स्टॉयने पश्चिमको बहुत पहले अैसे शब्दोंमें चेतावनी दे दी थी, जिनका आज भी अुतना ही महत्त्व है। (पाठक अिसी अंकमें दूसरी जगह टॉल्स्टॉयकी यह चेतावनी देखेंगे।) विचारकोंको अिस प्रश्न पर गहराअीसे विचार करना चाहिये और वैज्ञानिकोंके लिअे व्यवहारके नैतिक नियम बना देने चाहिये। वर्ना सर्व-सत्ता-सम्पन्न आधुनिक राज्य युद्धके 'नारकीय' कृत्यके लिअे अुनकी प्रतिभाका दुरुपयोग करता ही रहेगा।

१४-१०-'५३
(अंग्रेजीसे)

मगनभाअी देसाअी

www.vinoba.in

आजके तीन आवश्यक गुण

[मुंगेर शहरमें दिये हुअे प्रवचनसे]

सारा मानव-समाज अनादि कालसे सतत विकास कर रहा है और अुस अुस युगके अनुसार अपने अेक-अेक गुणका चिंतन और विकास करता आया है। आत्मामें असंख्य गुण हैं। यदि तारिकाओंकी गिनती कर सकें, या मिट्टीके कण कितने हैं अिसका हिसाब कर सकें, तो आत्माके गुणोंकी गिनती कर सकेंगे। अैसे अनेक गुणोंसे मंडित आत्मा है। आत्माके अनन्त गुणोंमें अेक-अेक जमानेको खींचनेवाला अेक-अेक गुण होता है, और अुस पर समाज अमल करके चलता है।

अेक जमाना था जब लोगोंने स्वच्छताका धर्म समझा, स्वच्छताको परम गुण माना और अुसका प्रयोग करना चाहा। अेक समय अैसा था जब लोगोंने काम-नियमनकी कोशिश की और विवाह-संस्था बनायी। अुस जमानेमें सारे मानव-समाजमें यही बात चली कि विवाह-संस्था कैसी हो। हिन्दू धर्ममें विवाहकी आठ विधियां सुनते हैं। आखिर अुनमें से अेक विधि तय हुअी। यानी समाजको काम-नियमनकी आवश्यकता महसूस हुअी और अुसकी तरफ समाजने ध्यान दिया।

प्राचीन अितिहासमें सुनते हैं कि अेक राजा दूसरे राजाकी रानीको भगा ले जाता था। आज अैसा नहीं सुनते। यानी कुछ काम-नियमन हमने सीखा है। अिसके मानी यह नहीं कि पूर्ण काम-विरक्त हो गये हैं, पर काम कुछ कम अवश्य हो गया है। अुसकी युक्ति सध गअी है। पहले अनेक रानियां होती थीं, पर आज वैसा नहीं है। अेक युगमें अुसका विकास हुआ। बहुत साहित्य भी लिखा गया। अनेक नाटक लिखे गये, अनेक काव्य लिखे गये। महान काव्योंमें भी द्रौपदीका हरण जैसा विषय मध्यबिन्दु रहता था। पर आज अैसी अिच्छा हमें नहीं होती।

तीन आवश्यक गुण

अिस तरह समाजने स्वच्छता और काम-नियमनकी कोशिश की और कुछ अच्छी-बुरी रूढ़ियां चल पड़ीं। आत्माके अेक-अेक गुणकी महिमा अेक-अेक जमानेमें होती है। समाज जिस गुण पर अमल करनेको अुत्सुक होता है, वह गुण अुस युगका राजा कहलायेगा। तो आजके जमानेमें कौनसा आवश्यक गुण है? जहां तक मैंने अध्ययन किया है मैं, अिस नतीजे पर आया हूं कि आज तीन गुणोंकी आवश्यकता है — अेक निर्भयता, दूसरा समता, और तीसरा समाज-निष्ठा। अिन तीन गुणोंकी बहुत आवश्यकता मानवको आज महसूस होती है, और जितनी भी कोशिश होती है सब अिन्हींके लिअे होती है।

निर्भयता

मैं कहता हूं कि आज अेटमबम बन रहे हैं, संहारसे लोग डर रहे हैं। समूचे राष्ट्रके राष्ट्र डरते हैं। अमेरिका अितना सम्पन्न देश है, अुसके बराबरीका शायद ही दूसरा देश हो, पर समूचे अमेरिकाको रूसका डर है। वैसे ही रूसको अमेरिकाका डर है। हिन्दुस्तानके लोगोंको पाकिस्तानका डर है और पाकिस्तानके लोगोंको हिन्दुस्तानका डर है। न सिर्फ अेक व्यक्तिको दूसरे व्यक्तिका डर है, बल्कि समाजके समाज अेक-दूसरेसे डरते हैं और संहार-साधनोंकी खोज करते हैं। वे निर्भय बननेका प्रयत्न कर रहे हैं।

हिन्दुस्तान जैसे पूरे राष्ट्रको अंग्रेजोंने निःशस्त्र बनाया। नतीजा यह हुआ कि हिन्दुस्तानके लोगोंके मनमें डर छा गया। शस्त्र न रखनेसे डर लगता है, तो अमेरिकामें डर क्यों है? सारा अमेरिका आधुनिक अस्त्र-शस्त्रसे पूरी तरह सुसज्जित है। फिर भी वह डर रहा है। यानी डर तो मनमें रहता है। हाथमें शस्त्र रखो, तो वह अपने नहीं दूसरेके काम आवेगा।

अेक अमेरिकन भाअी हमारे पास आये और पूछने लगे, आप अमेरिकाके लिअे क्या सलाह देते हैं? मैंने कहा — मैं अमेरिकाको क्या सलाह दूं? मैं तो अितनी लियाकत नहीं रखता। अपने देशके लिअे कुछ सुझाव दे सकता हूं। पर आप पूछते हैं तो कहता हूं। आप अितने शस्त्रास्त्र बनाते हैं और कहते हैं कि लोगोंको खूब काम मिलता है। बेकारी मिटती है। अिसलिअे यह नहीं कहूंगा कि शस्त्र मत बनाअिये; बल्कि कहूंगा कि जोरोंसे बनाअिये, ताकि सबको काम मिले। पर अुधर बेकारी कम करनेके लिअे रूस भी शस्त्र बढ़ा रहा है। दोनोंकी टक्कर होगी। नतीजा यह होगा कि अुनके हवाअी जहाजोंको आपके हवाअी जहाज तोड़ेंगे और आपकी नौकाओंको अुनकी नौकायें डुबोयेंगी। अिस तरह अेक-दूसरेके जहाज डुबोनेके बजाय अपने-अपने देशमें क्रिसमसके दिन खुद ही अपने जहाजोंको डुबो दीजिये। अिससे सबको काम भी मिलेगा और शांति भी रहेगी। हमारे वे डुबोयें और अुनके हम डुबोयें, यह परस्परावलंबी जीवन क्यों?

अेक शब्द प्राचीन राज्य-शास्त्रमें मिलता है। राज्यमें क्या क्या होना चाहिये, यह बताते हुअे कहा है कि राज्यमें अभय होना चाहिये। यानी हर कोअी निर्भयता महसूस करे। हर कोअी समझे कि मुझ पर कोअी अन्याय नहीं हो सकता। और अगर अन्याय हुआ भी तो मेरे पक्षमें धर्म है, न्याय है। मुझे भयका कोअी कारण नहीं है। निर्भयता जिस देशमें रहेगी, अुस देशमें स्वराज्य है, अैसा कहा जायगा।

समता

दूसरा आवश्यक गुण है समता। अेक जमानेमें अच्छी नीयतसे दर्जे बनाये गये थे। हरअेकको अपनी-अपनी लियाकतके अनुसार तालीम मिलनी चाहिये, अैसी व्यवस्था थी। अुस जमानेमें मानव-गुणोंकी योग्यता देखी गयी। वे सोचते थे कि मूर्खको तालीमकी क्या आवश्यकता। मूर्खको काममें लगावेंगे तो काम बनेगा, और अगर अुसको बुद्धिके काममें लगावेंगे, तो वह काम नहीं होगा और मेहनतका काम भी नहीं होगा। अिसलिअे कुछके हाथमें राजका भार रखो और कुछके हाथमें देशकी रक्षा, कुछ व्यापार करेंगे और कुछ मेहनत-मजदूरी करेंगे। तीन वर्णोंकी सेवा करना शूद्रका भाग्य माना गया। हमें आज लगता है, अुनकी नीयत अच्छी नहीं थी। पर अैसा नहीं था। आगे चलकर विषमता बढ़ी और लोग समझने लगे कि योग्यतायें तो हरअेककी बढ़नेवाली हैं। जिस युगमें विज्ञान नहीं था, अुस युगमें दर्जे बनाने पड़े। पर जबसे विज्ञान शुरू हुआ है, तबसे ध्यानमें आया कि विज्ञानसे मनुष्यका विकास बराबर हो सकता है, अुसके लिअे दर्जे बनानेकी आवश्यकता नहीं है।

अिस जमानेका साधारणसे साधारण मनुष्य भी स्वच्छताका भान रखता है। हर कोअी अुतनी स्वच्छता रखता ही है, अैसी बात नहीं है। फिर भी प्राचीन कालसे अधिक स्वच्छता आजके जमानेका अेक साधारण मनुष्य रखता है। अुस जमानेमें स्वच्छताके साधन आजके जितने नहीं थे। वे लोग घी जलाकर हवा शुद्ध करते थे। पर आज वैसी बात नहीं है। आज स्वच्छताके साधन आसानीसे प्राप्त होते हैं। पहले जमानेमें भंगीका अलग मुहल्ला होता था और ब्राह्मणका अलग, क्योंकि स्वच्छताके साधन अुनके पास नहीं थे। पर आज विज्ञान बढ़ा है और अैसे भेदोंकी आवश्यकता नहीं रही।

मैं आपको दूसरी मिसाल दूं। पुराने लोगोंने यह नियम बनाया था कि वेदपाठ ब्राह्मण ही करें। दूसरे कोअी नहीं कर सकते। यह क्यों? क्योंकि अुस जमानेमें प्रिंटिंग प्रेस नहीं था।

www.vinoba.in

वेद कण्ठस्थ करना होता था। तो सब तो अुच्चारण ठीकसे नहीं कर सकेंगे, अिससे वेद बिगड़ेंगे। अिसलिअे अुन्होंने अैसा किया कि खास वर्गके लोग ही वेदपठन करेंगे। अिसमें अुनकी नीयत खराब नहीं थी। पर आज हमने प्रिंटिंग प्रेसको जन्म दिया है, अुससे वह छप सकता है, और हर कोअी अुसका पाठ कर सकता है। अितना ही नहीं, कोअी सुन्दर पाठ करे तो अुसका रेकार्ड भी ले सकते हैं और घर-घर वेदपठन हो सकता है। प्राचीन कालकी वे मुश्किलें आज नहीं हैं। अिसलिअे शिक्षणके लिअे किसी तरहका प्रतिबन्ध नहीं रहना चाहिये। पुराने जमानेमें यह जो विषमता थी, वह अुस जमानेमें आवश्यक थी। पर आज विज्ञानके युगमें दर्जे रखनेकी जरूरत नहीं है। अिसलिअे आज समताको भूख है, और जो समताके खिलाफ बोलता है, वह समाजको अच्छा नहीं लगता। समताको लानेका जो भी आन्दोलन होगा, अुससे लोगोंमें अुत्साह आयेगा, क्योंकि अुसकी आज आवश्यकता है।

समाज-निष्ठा

तीसरा गुण है समाज-निष्ठाका। अिसमें शक नहीं कि व्यक्तिगत विकासके लिअे सहूलियत होनी चाहिये। पर विज्ञानके कारण वह सहूलियत हो सकती है। प्राचीन कालमें गुरु मुश्किलसे मिलते थे। अिसलिअे सबको तालीम नहीं दे सकते थे। पर आज तालीम देनेके व्यापक साधन हमारे हाथमें आये हैं, तो व्यक्तिगत विकासकी चिन्ता नहीं है। आजका व्यक्ति अपना विकास करके, अपना विकसित व्यक्तित्व समाजको अर्पण करे, अिसकी आवश्यकता है। अेकांतमें मनुष्य प्रार्थना करता है तो अुसे प्रेरणा मिलती है, यह सही है। पर आजके जमानेमें सामूहिक प्रार्थनासे जितनी प्रेरणा मिलती है, अुतनी व्यक्तिगत रूपसे प्रार्थना करके नहीं मिलती, यद्यपि हृदय-परीक्षणके लिअे व्यक्तिगत प्रार्थनाकी भी जरूरत है।

अेक जमाना ध्यान-योगका था। बीचमें संत आये और कह दिया — जहां अनेक लोग अिकट्ठा होकर प्रार्थना करते हैं वहां परमेश्वर रहता है।

"नाहं वसामि वैकुंठे,
योगीनाम् हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायंति
तत्र तिष्ठामि नारद।"

वैष्णवोंने यह वचन चलाया। सामूहिक भक्ति चलायी। सामूहिक मांगसे समाज-निष्ठाकी मांगका आरंभ वैष्णवोंने किया। अुसके पहले अेकांत प्रार्थनाका महत्त्व था। वैष्णवोंने सामूहिक भक्तिभाव शुरू कर दिया। वे आधुनिक जमानेके पूर्वाचार्य थे। आज हमें ध्यान-योगमें अुतना आकर्षण नहीं होता, जितना सामूहिक भक्तिमें होता है।

महात्मा गांधीने सामूहिक अहिंसाका प्रयोग किया। जिसका प्रयोग बुद्ध और महावीरने किया था, अुसे ही महात्मा गांधीने सामूहिक रूप दिया। लाखों लोग अूपर चढ़े। महात्मा गांधीके बाद हम सब सुस्त हो गये थे, पर अब यह भूदान आया और वह चल रहा है। हमें अेक लाख दान-पत्र मिले। यह कोअी छोटी बात नहीं है। अिसका कारण यह है कि यह जमानेकी मांग है। आज हम कहते कि त्याग करो, लंगोटी पहनकर रहो, तो कोअी तैयार नहीं होता। पर जब हम कहते हैं कि समाजके लिअे त्याग करो, तो पूरीकी पूरी जमीन देनेवाले काश्तकार भी मिले हैं। छोटे-छोटे काश्तकार भी दे रहे हैं और आप देखते हैं कि राजा-महाराजा भी अिस काममें लगे हैं।

आप गांवमें जाकर यह समझा दो कि गांवकी सारी जमीन गांवकी है, तो वे यह सुननेके लिअे राजी हैं। यह आन्दोलन हिम्मतके साथ चलावेंगे, तो कोअी गांव पूरेके पूरे मिल सकते हैं। आपके यहां सेन्हा गांव मिला है। यू० पी० में मंगरोठ मिला है। अगर यह बात समझा दो तो कअी गांव आगे आयंगे, क्योंकि समाज-निष्ठा आजकी मांग है और समाजको जितना दे सकें अुतना देना चाहिये अिसकी भूख है। समाजकी तरफसे मांग आती है तो अुसे पूरी करनेकी अिच्छा अवश्य होती है, भले मोह न छूटता हो।

बिहारमें जमीन मांगनेकी बात चली, तो कोअी ना नहीं कहता। सब कोअी देते हैं। अिसके मानी यह नहीं कि अुनकी आत्मा अितनी अूंची सतह पर पहुंच चुकी है कि अुन्हें त्यागकी प्रेरणा होती है। पर जहां जमानेकी मांग आती है, समाज-निष्ठाकी बात आती है, वहां मनुष्य अुसे कबूल करता है। अुससे अुसे प्रेरणा मिलती है।

व्यक्तिका मोक्ष अिसीमें है कि वह समाजकी सेवामें लीन हो। मोक्षके मानी क्या? मोक्षके मानी व्यक्तिका अहंकार मिटना। जहां अहंकार मिट गया, वहां व्यक्ति समाजरूप हो गया, ब्रह्मांडरूप हो गया। वहां अुसे मोक्ष मिल गया।

विनोबा

भूदान-प्राप्ति

[ता० २०–११–'५३ तक]

प्रांतका नाम	कुल प्राप्ति	दाताओंकी संख्या
१. बिहार	११,४९,५६५	८२,३७९
२. अुत्तर-प्रदेश	५,००,३३१	१२,३४३
३. राजस्थान	२,२९,७७०	९२६
४. हैदराबाद	६८,७६८	....
५. मध्य-प्रदेश	५६,५३५	....
६. मध्यभारत	५१,४३८	....
७. अुत्कल	४५,०२१	....
८. गुजरात	१८,३९६	....
९. तामिलनाड़	१४,२५२	१,८७७
१०. आंध्र	१०,२९९	....
११. केरल	१०,०००	....
१२. महाराष्ट्र	९,२७०	६९८
१३. सौराष्ट्र	८,०००	....
१४. दिल्ली	७,६५९	....
१५. विंध्यप्रदेश	३,७००	....
१६. पंजाब	२,४३५	....
१७. मैसूर	२,००७	८३०
१८. कर्नाटक	१,६३४	....
१९. हिमाचल प्रदेश	१,३५०	....
२०. आसाम	१,३४९	....
२१. बंगाल	३७४	३१०
	२१,९२,१५३	९९,३६३

नोट: १. ६६३६ कुटुंबोंमें ३८,१७४ अेकड़ भूमि बांटी गअी है।

२. अुत्तर-प्रदेशके कुछ दाताओंने अन्य प्रांतोंकी अपनी भूमिके दानपत्र भरे थे। १५,००० अेकड़की वह भूदान-प्राप्ति अुन संबंधित प्रांतोंमें अब जोड़ दी जानेके कारण अुत्तर-प्रदेशकी अुतनी प्राप्ति पूर्वके आंकड़ोंमें से कम की गयी है।

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ, सेवाग्राम, (वर्धा)

कृष्णराज मेहता
दफ्तर मंत्री

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

५ दिसम्बर १९५३

पाकिस्तानका अिस्लामी गणतंत्र

किसी स्वतंत्र देशका अपनी प्रजाके लिअे कैसा संविधान होना चाहिये, यह सामान्यतः अुसका अपना प्रश्न है। साधारण तौर पर कहा जाय तो दूसरे लोगोंको अिस विषयमें कुछ कहनेका अधिकार नहीं होना चाहिये, हस्तक्षेप करनेका तो बिलकुल नहीं। लेकिन पाकिस्तानके संविधानकी रचनाका आधार थोड़ा भिन्न है, खास करके भारत और पाकिस्तानके बीचके अनोखे सम्बन्धके कारण। ये दो देश, जो आज दो अलग राज्य हैं, कुछ साल पहले अेक ही सरकारके मातहत अेक राष्ट्र थे।

और जब १९४७ में अुन्होंने दो स्वतंत्र राज्योंके रूपमें अलग होना स्वीकार किया, तो वे अपनी भावी नीतिके बारेमें कुछ आशायें दिलाकर अेक-दूसरेसे अलग हुअे। अुन्होंने अपनी-अपनी प्रजाको भी अपनी भावी शासन-प्रणालीके सम्बन्धमें कुछ बातोंका वचन दिया था — जैसे प्रेमपूर्ण व्यवहार और अच्छे पड़ोसी-धर्मका पालन, मित्रता और सद्भावना तथा हर राज्यमें रहनेवाले अल्पसंख्यकोंके प्रति अुदार नीति। अिसलिअे आज जब पाकिस्तान अपना संविधान बना रहा है, तब भारतके लोग अुसके पड़ोसियोंके नाते भी स्वभावतः अुसकी ओर आकृष्ट हुअे बिना नहीं रह सकते।

भारतके प्रधानमंत्रीने सार्वजनिक रूपमें अिस विषयका अुल्लेख किया, जिसे पाकिस्तान दुर्भाग्यसे सही अर्थमें नहीं ले रहा है। अिस बातसे केवल पाकिस्तानका अपना ही सम्बन्ध नहीं है; यह अितनी नाजुक है कि अगर सारे अेशियाअी जगतके लिअे नहीं तो कमसे कम मध्यपूर्व और भारतके लिअे तो वह ज्यादा परिणामकारी और महत्त्वपूर्ण रूप ले सकती है।

आज हम अैसी दुनियामें रहते हैं, जो सामन्तशाहीके जमानेकी दुनियासे बिलकुल भिन्न है, जब साम्प्रदायिक राज्यों और जातीय व धार्मिक अलगावका बोलबाला था। आज न सिर्फ हमारे संस्कृति और सभ्यता तथा नीतिशास्त्र और धर्म-सम्बन्धी विचार व आदर्श बल्कि व्यापार और व्यवसाय भी आन्तरराष्ट्रीय रूप ले रहे हैं और अधिकाधिक अुस जागतिक दृष्टिकोणसे प्रभावित हो रहे हैं, जो विज्ञान और आन्तरराष्ट्रीयताकी भावनावाले हमारे आधुनिक युगकी अेक अनोखी देन है। अिसलिअे पाकिस्तानके संविधानकी रचनाका प्रश्न खास करके अुसके पड़ोसी हम भारतवासियोंके लिअे गहरी चिन्ताका विषय बन जाता है।

पाकिस्तानकी संविधान-सभाने अपने पिछले अधिवेशनमें कुछ अैसे निर्णय किये, जो अुसके अपने लोगोंके लिअे भी, खास करके अुसकी अल्पसंख्यक जातियोंके लिअे — जो स्वभावतः अुनसे बहुत घबरा गअी हैं — अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। अुदाहरणके लिअे, अुसने यह तय किया है कि नया राज्य पाकिस्तानका अिस्लामी गणतंत्र कहा जायगा। अुसका प्रेसिडेन्ट मुसलमान होगा। राज्यमें पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचक-मंडल होंगे। पाकिस्तानकी किसी धारासभामें अैसा कोअी कानून पास नहीं किया जायगा, जो कुरान और सुन्नाहके खिलाफ हो। राज्यकी ओरसे अिस्लामका अेक बोर्ड कायम किया जायगा, जिसका काम हरअेक नागरिकके लिअे अिस्लामकी शिक्षाका प्रबन्ध करना होगा। कोअी बात अिस्लामके विरुद्ध है या नहीं, अिसका फैसला करना, जैसा कि शुरूमें विचार था, मुस्लिम मुल्लाओंके बोर्डके हाथमें नहीं रहेगा, बल्कि कानूनी अदालतोंके हाथमें होगा। ये धारायें साम्प्रदायिक कट्टरता और मजहबी कट्टरपनके स्पष्ट चिह्न हैं और पाकिस्तानके भीतर ही नये द्विराष्ट्र सिद्धान्तके आधार पर रची गअी मालूम होती हैं।

पाकिस्तानकी संविधान-सभाके हिन्दू अल्पमतके प्रतिनिधियोंने अिन धाराओंका विरोध किया लेकिन कोअी लाभ नहीं हुआ। अिसके खिलाफ यह अजीब दलील दी गअी कि पाकिस्तानका जन्म ही दो राष्ट्रोंके सिद्धान्त पर हुआ था, हिन्दू और मुसलमान दो अलग राष्ट्र हैं और अिसलिअे नये राज्यके कारबारमें वह भेद जारी रहना चाहिये। लेकिन क्या श्री जिन्नाने यह नहीं कहा था कि अेक बार पाकिस्तानका अलग राज्य बन जानेके बाद वह मुसलमानों और गैरमुसलमानोंके बीच कोअी भेद नहीं करेगा, बल्कि आजकी दुनियाके दूसरे राज्योंकी तरह अपने सारे नागरिकोंके साथ समानताका व्यवहार करेगा? क्या वह भारत और पाकिस्तानको दिया हुआ अेक पवित्र वचन नहीं था?

अिस्लामके विरुद्ध बातोंकी धारामें अेक अपवाद यह रखा गया है कि आर्थिक प्रश्नोंका कुरान और सुन्नाहके अनुसार होना जरूरी नहीं है। कारण स्पष्ट है। कुरान ब्याज, सूदखोरी वगैराकी मनाही करता है। अगर यह सिद्धान्त आधुनिक राज्यके आर्थिक मामलों और लेन-देनके व्यवहार पर लागू किया जाय, तो अुसकी अर्थ-व्यवस्था अेक दिनमें ही टूटकर खतम हो जायगी। भाड़ा, ब्याज, बैंकिंग (सराफी) वगैरा आजके व्यापार और वाणिज्यके अभिन्न अंग हैं। और पाकिस्तान अिनके बिना बाहरी दुनियाके साथ टिक नहीं सकता। अिसलिअे यह अपवाद जरूरी और अुचित मालूम हुआ है। अिसी तरह यह भी स्वीकार किया जाना चाहिये कि गैरमुस्लिम अल्पसंख्यकोंको कुरानके कानूनसे मुक्त माना जाय। अुदाहरणके लिअे, राज्यकी ओरसे अनिवार्य रूपमें दी जानेवाली अिस्लामकी शिक्षासे वे मुक्त क्यों नहीं रखे जाने चाहिये? राज्यका मुखिया मुसलमान ही क्यों हो, दूसरा क्यों नहीं? अिस निर्णयके पक्षमें यह दलील दी जाती है कि पाकिस्तानके ८५ प्रतिशतसे ज्यादा लोग मुसलमान हैं, अिसलिअे अिस धारामें कोअी अनोखी या अेतराजके लायक बात नहीं है। अगर यह बिलकुल साफ है, तो अिसके लिअे वैधानिक व्यवस्थाकी कोअी जरूरत ही नहीं है। अैसी हालतमें भी, संविधानको किसी पाकिस्तानी नागरिकको अुसके धर्मके कारण राज्यका प्रेसिडेन्ट बननेसे क्यों रोकना चाहिये? क्या अिससे दो वर्ग पैदा नहीं होंगे — अेक विशेष अधिकारोंवाला और दूसरा विशेष अधिकारोंसे वंचित रहनेवाला, अेक श्रद्धालु और दूसरा काफिर, अेक राज्यकी कृपाका पात्र और दूसरा राज्यकी कृपासे सर्वथा वंचित? क्या यह लोकतांत्रिक शासनके बुनियादी सिद्धान्तोंकी ही जड़ नहीं खोदता?

मुख्य प्रश्न यह है: क्या पाकिस्तान साम्प्रदायिक राज्य बनना पसन्द करता है? राज्यके धर्मके रूपमें मान्यता पानेवाला अिस्लाम कैसा होगा? दूसरे मुस्लिम राज्य अुसे किस नजरसे देखेंगे? क्या आजकी दुनियामें अैसे राज्यका बचाव किया जा सकता है? पाकिस्तान अपनी साम्प्रदायिक राज्यकी यात्रा शुरू करे, अिससे पहले अुसे अिस प्रश्नका अुत्तर देना चाहिये।

फिर, अेक धार्मिक ग्रन्थ सामान्य कानूनकी पुस्तक नहीं हो सकती, हालांकि कुरानमें सामान्य कानूनका होना बताया जाता है। लेकिन वह कानूनकी पुस्तक श्रद्धालुकी निगाहमें ही है या हो सकती है, दूसरोंकी निगाहमें नहीं। अिसके अलावा, धर्मके अर्थका विकास और व्याख्या अुसे व्यक्तिगत जीवनमें अुतारनेसे होती है; अिस बातका सम्बन्ध कानूनी अदालतोंसे नहीं हो सकता।

www.vinoba.in

अगर पाकिस्तान अूपरके ढंगका अिस्लामी राज्य बननेका निर्णय करता है, तो अुसके सामने ये कुछ प्रश्न खड़े होंगे। अिसका अर्थ होगा अुस सबकको सीखनेमें बिना कारण समय लेना, जो आधुनिक तुर्कीने पहले मुस्लिम राज्य और बादमें अपने फायदेके लिअे आधुनिक राजनैतिक राज्यका रूप लेकर सीखा। अैसी हालतमें पाकिस्तानको शायद कुछ समय बाद ही क्रांतिकारी परिवर्तनका सामना करनेके लिअे तैयार रहना होगा, सिवा अिसके कि वह तुर्कीके अितिहाससे सबक लेनेका फैसला कर ले।

३०-११-'५३ मगनभाअी देसाअी

(अंग्रेजीसे)

शराबबन्दी और सरकार

३

शराबबन्दीके ध्येयको प्रजातंत्रके बुनियादी ध्येयोंमें स्थान देकर स्वीकार कर लेनेके बाद अुसके कर्णधार ही अुसके अमलमें शिथिलता दिखायें, तो फिर जनताके बीच पड़े हुअे चोरों, मवालियों या शराबियोंको कैसे दोष दिया जाय? शराबबन्दीकी नीतिको स्वीकार करके अुसके निरपवाद अमलका आग्रह न रखना स्वयं ही अपने बायें हाथसे अपना दायां हाथ काटने जैसा है। जो सरकार अपने जंगलों या समुद्रकी खाड़ियोंके छिपे स्थानोंमें नाजायज शराब गाल कर पीन या लाने-ले जानेवाले कोलियों और नमक बनानेवाले अन्य आदिवासियोंको या कारखानोंकी सख्त मजदूरीकी थकावटको भूलना चाहनेवाले मजदूरोंको सजा देनेकी सावधानी दिखाती है, वही अमर अपने शिक्षित कहे जानेवाले बुद्धिजीवी शहरियों, कर्मचारियों और अधिकारियोंको थोथे कारणोंके आधार पर खुले आम शराब पीनेके परवाने दे, क्लबोंमें, हवाखोरीके केन्द्रोंमें, रेलवेमें और अूंचे कहे जानेवाले वर्गोंके प्रमादी आनन्द-प्रमोदके अैसे अन्य स्थानोंमें शराब पीनेकी छूट रखे और अुसकी बड़ीसे बड़ी अदालतोंके अूंचे आसनों पर बैठकर राजा-प्रजा सबका न्याय करनेवाले न्यायाधीश ही शराब पीनेवाले और शराब पीनेके परवाने देनेवाले हों, तो सामाजिक नीति और सदाचारके नियम बनानेवाली और परम्परा कायम करनेवाली जनताकी सरकारके नाते लोगों पर भला अुसका कितना असर पड़ेगा?

सवाल यह है कि प्रजाने समाजकी रक्षा और अभ्युदयके लिअे नीतिके जो भी नियम, आग्रह या मूल्य निर्धारित किये हों, अुनका पालन करनेका फर्ज अुस अुस समाजके हरअेक सदस्यका होना चाहिये या नहीं? और हो तो किस हद तक? नीति-सम्बन्धी आग्रह या धर्माज्ञायें भी अन्तमें तो विभिन्न प्रजाओंके समय-समयके अनुभवोंका निचोड़ ही होती हैं। अुन अनुभवोंके आधार पर हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाजोंने शराबको हराम माना है। जो शराब अेक जमानेमें आदमीको हैवान बनाती या बननेका दरवाजा खोल देती थी, वह आज कोअी देवदूतका पद देनेवाली नहीं बन गअी है। सज्जन-दुर्जन, शिक्षित-अशिक्षित, सब पर अिस सत्यानाशी शराबका अेकसा असर होता है। शराब पीनेके विषयमें मर्यादाकी जो बातें की जाती हैं, वे ज्यादातर धोखेबाजी या आत्म-वंचना ही होती हैं, अैसा सर्वत्र अनुभव आया है।

अैसी स्थितिमें समाजकी तरफसे मिलनेवाली सुविधायें, रक्षा और प्रतिष्ठाका अुपभोग करनेका अधिकार कायम रखकर मनमाने ढंगसे बरतनेमें समाजके स्वीकार किये हुअे नीति-नियमों, आग्रहों या मूल्योंकी अुपेक्षा करनेकी छूट लेना व्यक्तिके लिअे अगर अुचित हो तो वह किस हद तक? 'दोनों हाथोंमें लड्डू' वाली बात तो कभी नहीं चल सकती।

स्व० दयाराम गिडुमल अिस सदीके शुरूके दशकोंमें अिस प्रदेशमें हमारे भद्र समाजके अेक सेवानिवृत्त न्यायाधीश हो गये हैं। वे अपनी संस्कारिता, सज्जनता, भूतदया और परोपकार-परायण जीवनसे हमारे आदर-सम्मान और व्यक्ति-पूजाके वैसे ही अधिकारी बन गये थे जैसे कि स्वर्गीय ठक्कर बापा। अपने वैसे ही अुज्ज्वल जीवनके अंतिम भागमें सारे देशके दुर्भाग्यसे अिस साधुचरित पुरुषसे अेक भूल हो गअी, जिसका अुनकी संस्कारिता, चारित्र्य और स्वीकृत मूल्योंके साथ किसी भी तरह मेल नहीं बैठता था। अिस मानवी भूलका विवेकपूर्ण प्रायश्चित्त अुन्होंने अपनेको 'जिन्दा दफनाकर' किया। वे जान-बूझकर कठोर अेकान्त-वासका व्रत लेकर समाजकी नजरसे ओझल हो गये। अुन्होंने सारे सामाजिक सम्पर्क और मान-प्रतिष्ठाका स्वेच्छासे त्याग कर दिया। वे घनिष्ठ मित्रों, जान-पहचानवालों या शिष्यभावसे अुनका समागम चाहनेवाले जिज्ञासुओंको भी मिलनेसे अिन्कार कर देते थे। यहां तक कि अेक बार स्वयं गांधीजीने अुनके दर्शनकी अिच्छा बताकर मिलना चाहा, तब भी लाचारी दिखाकर अुनसे मिलनेके लिअे ना कह दिया!

अिस प्रकार अपनी जीवनभरकी कीर्तिको ठुकराकर समाजके मूल्योंके सामने सन्तोंकी नम्रतासे सिर झुकानेवाले दयाराम गिडुमल और अूंचेसे अूंचे न्यायासनों पर बैठनेवाले होने पर भी अेक या दूसरे कारणोंके बहाने खुले आम नियमित शराब पीनेके परवाने, अपना हक समझकर, मांगनेवाले न्यायाधीशोंके बीचका भेद समझने लायक है। अैसे व्यक्ति चाहे जितने विद्वान या बड़ी-बड़ी बातें करनेवाले हों, लेकिन अुन्हें अिसलिअे अूंचीसे अूंची सामाजिक प्रतिष्ठाके साथ बड़े न्यायासनों पर बैठानेवाली या रहने देनेवाली प्रजातांत्रिक सरकारों और अैसी स्थितिको सहन करनेवाली प्रजा दोनोंमें से किन्हें ज्यादा जड़ कहा जाय, यही सवाल है।

आजादीके आनेसे हमारी राजनैतिक गुलामीका तो अन्त हो गया, लेकिन राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक या शैक्षणिक किसी भी क्षेत्रमें हमारा मानस आज भी बिलकुल वैसा ही गुलाम बना हुआ है। अिसका अिससे भी करुण और अेक स्वतंत्र राष्ट्रके नाते हमारे मुंह पर भारी कालिख पोतनेवाला अुदाहरण तो यह है — अिंग्लैंडकी रानीकी ताजपोशीके अुपलक्षमें हमारे देशके बड़ेसे बड़े सरकारी अधिकारियोंने नअी दिल्लीमें जो समारोह किया, अुसमें स्वतंत्र भारतके रीति-रिवाजों या मुगल बादशाहोंकी शानशौकतको शोभा देनेवाला आनन्द-मंगल मनानेके बजाय जीवनभर गांधीजीके साथ कंधेसे कंधा मिलाकर आजादीकी लड़ाअीमें जूझनेवाले हमारे देशनेताओंको रानीके 'स्वास्थ्य' (कुशल-मंगल) की कामना करनेके लिअे शरबत या अैसे ही दूसरे पेयसे भरी हुअी शराब पीनेकी प्यालियां अंग्रेजोंकी तरह खड़े होकर अेक साथ गटकनेकी नकल करते हुअे सारे देशकी जनताने सिनेमाके पर्दे पर देखा!

किसी गीतकी कड़ी है: 'आझादी आवी तो आवी, डाकणनो वांसो लअी आवी'।* हमारी अभी-अभी मिलनेवाली आजादीकी अनेक नियामतोंमें से अेक नियामत है डेमॉक्रेसी और व्यक्ति-स्वातंत्र्यके नाम पर कोअी भी बहाना बनाकर शराब पीनेकी छूट मांगना और पाना! जो आजादी हमने गांधीजीकी छत्रछायामें प्राप्त की, अुसकी ताजगीका अेक नमूना क्या यही है कि सारी प्रजाने मिलकर सम्पूर्ण देशके लिअे जो संविधान बनाया, अुसका मजाक और फजीहत अुसी संविधानकी दुहाअी देकर देशका कारबार करनेवाले मंत्रियों, अधिकारियों और न्यायाधीशों द्वारा होने दी जाय?

* अर्थात् आजादी आअी तो जरूर, लेकिन अपने साथ कअी बुराअियां भी ले आअी है।

www.vinoba.in

यह शराबबन्दीका आन्दोलन अैसा है, जिसे राष्ट्रकी आजादीके अितिहासके बुनियादी आन्दोलनोंमें ५० वर्षसे स्थान मिला और जिसका देशके अग्रगण्य लोगों और नेताओंने हमेशा स्वागत किया। आज हरअेक क्षेत्र और पक्षके कार्यकर्ता और जनता अुठते-बैठते जिन राष्ट्रपिताके नाम और कार्यका हवाला देते नहीं थकते, अुन गांधीजीके कार्यक्रमोंमें शराबबन्दीका सदा महत्त्वका स्थान रहता था और अुस कारणसे भी आज प्रजातंत्रके संविधानमें शराबबन्दीको हमारे बुनियादी राष्ट्रीय ध्येयोंमें स्थान प्राप्त हुआ है। अैसा होते हुअे भी बड़े नेताओंकी शिथिलता या लापरवाहीके कारण आज रास्तें चलता हरकोअी आदमी या अखबारवालोंसे लेकर केन्द्रीय सरकारके मंत्रियों तक शराववन्दीकी नीतिके खिलाफ रात-दिन मनमाने ढंगसे दिलकी कुढ़न निकालते और बकवास करते नहीं थकते। अिससे ज्यादा शोचनीय और अेक स्वतंत्र राष्ट्रके नाते हमारे लिअे लांछनीय चीज और क्या हो सकती है?

अिस बातकी हमेशा हिमायत की जाती है कि भारत जैसे बड़े देशका कारबार व्यवस्थित और मजबूत ढंगसे चलानेके लिअे केन्द्रीय सरकारको सदा जाग्रत और सावधान रहना चाहिये और अुसके सारे अंग-अुपांग, विभाग और राज्य संविधानका बुद्धिपूर्वक और लगनके साथ अमल करें, अिसके लिअे अुसे सख्तीसे काम लेना चाहिये। देशी राज्योंका अेकीकरण करके राजा-महाराजाओंकी स्वच्छन्दता और निरंकुशता तथा मालिकी हकों पर नियंत्रण लगानेमें केन्द्रीय सरकारने कड़ाअीसे काम लिया और तीन-पांच करनेवाले अिक्के-दुक्के राजाओंको अपनी सही स्थितिका भान कराया। अुसी तरह अिस शराबबन्दीके प्रश्न पर भी हर किसीके हाथों होनेवाली संविधानकी बेअिज्जतीको रोकनेके लिअे केन्द्रीय सरकारको दृढ़तासे काम लेना चाहिये। किसीको अिस प्रश्नका मजाक अुड़ाकर परोक्ष रूपमें भारतीय संविधानका मजाक अुड़ाने देना प्रजाके आत्म-सम्मानको हानि पहुंचाना है।

आज यह कहनेकी तो कोअी हिम्मत नहीं कर सकता कि शराब पीनेकी आदत या छूट अच्छी और वांछनीय वस्तु है। अुसका खातमा होना चाहिये, अिस बारेमें भी आखिर किसीको आपत्ति नहीं हो सकती। लेकिन प्रधानमंत्री पंडित नेहरूके किसी कथनका हवाला देकर अखबारवाले और दूसरे नेता आजकल हर जगह जो दलील देते रहते हैं, वह पहले क्या और बादमें क्या किया जाय — अिस 'प्रायोरिटी' के प्रश्न तक ही सीमित रहती है। अिन अखबारवालों और नेताओंसे, जो जनताके सच्चे प्रतिनिधि बनकर बातें करते हैं, कहा जाय कि वे गांवोंमें जाकर किसी भी श्रमजीवी परिवारकी मां-बहनोंसे पूछें कि 'बहन, तेरा कमाअू पति या लड़का गांवकी दूकान पर शराब पीनेकी छूट भोगकर तेरे घरबारकी बरबादी करे और अुसकी आयमें से सरकार तेरे छोटे लड़के-लड़कियोंको गांवकी शालामें पढ़नेकी सुविधा दे यह तुझे पसन्द है या शराबकी दुकानें बन्द रहें और तेरे बच्चोंकी गांवमें ही पढ़नेकी सुविधा कम हो जाय या बन्द हो जाय यह पसन्द है? अिन दोनोंमें से किसी अेकका चुनाव करनेके लिअे तुझसे कहा जाय तो तू किसे पसन्द करेगी?' तो अिसका क्या अुत्तर मिलेगा, अिस बारेमें ज्यादा विचार नहीं करना होगा। अैसी हालतमें, थोड़ेसे पढ़े-लिखे शहरी शराबियोंकी अथवा अुन्हें और जनताको शराब पिलाकर आय करनेवाले अुनके कुछ दलालोंकी जनताका सर्वनाश करनेवाली हिमायतको 'प्रायोरिटी' या दूसरे तीसरे बहाने बनाकर प्रोत्साहन देनेमें क्या लाभ है?

फ्रान्सके अितिहासमें ड्रेफुस नामक अेक निर्दोष आदमीके घमंडी फौजियोंके हाथ मार खाकर देशनिकालेकी सजा पाने और अिसके कारण सारी प्रजामें अुपद्रव मचनेका किस्सा है। प्रजाके अेक सत्यप्रिय और न्यायप्रिय व्यक्तिने अिस बिना कारण सजा पाये हुअे आदमीकी मदद करके फौजियोंका भंडाफोड़ किया। अिस बात पर सारे देशकी जनता फौजी पक्ष और प्रजा पक्ष जैसे दो भागोंमें बंट गअी और अन्तमें सत्यकी जीत हुअी तथा शक्तिशाली फौजी पक्षको हार खानी पड़ी। हमारे देशमें अिस शराबबन्दीके प्रश्न पर आज किसी अेक व्यक्तिको न्याय देने-दिलानेका सवाल नहीं है। यहां तो देशके लाखों-करोड़ों श्रमजीवी लोगोंको शराबका व्यसन लगाकर अुनके घरबार, स्वास्थ्य और सुखशांतिको नष्ट करके मुट्ठीभर शहरियों, सैलानियों और बुद्धिजीवियोंको शराब पीनेकी सुख-सुविधायें मिलें, अिसके लिअे अेक प्रजाभक्षक दैत्यको सभ्यता और प्रतिष्ठाका जामा पहनाकर जीवनदान देनेके लिअे शैतानके साथियोंकी ओरसे तरह-तरहकी सुहावनी दलीलें दी जाती हैं।

लेकिन हाथ-कंगनको आरसी किस लिअे? शराबबन्दीके अिस अेक ही प्रश्नको लेकर शराबकी छूटके ये सारे हिमायती और मंत्री — स्वयं प्रधानमंत्री भी — सात लाख गांवोंका चुनाव लड़नेको तैयार हैं? जरा लड़कर तो देखें। यह तो बहुत बड़ी बात है, लेकिन अगर वे भारतके संविधानमें से शराबबन्दीके ध्येयवाली धारा निकलवा देनेका प्रस्ताव संसद्में लानेकी हिम्मत करें, तो भी अुन्हें समझ पड़ जायगा कि वे कहां खड़े हैं।

(समाप्त)

(गुजरातीसे) **स्वामी आनन्द**

पुरुषार्थी श्री अंगनू भगत

पूज्य विनोबाने अपने 'गीता-प्रवचन' में जिस भक्त पुन्डलीककी चर्चा की है, अुसका ठीक प्रतिरूप हमें देखनेको मिला रायबरेली जिलेके हाजीपुर गांवमें। भूमि-दान-यज्ञके सिलसिलेमें पूज्य बाबा राघवदासजीके साथ हम अिस जिलेकी पैदल यात्रा कर रहे थे। हाजीपुर पहुंचने पर हमें श्री अंगनू भगतके दर्शन हुअे, जो अपने हाथमें करनी लिये हुअे पंचायत-घरके निर्माणमें लगे हुअे थे। बाबाजीके पहुंचने पर अुन्हें प्रणाम किया और फिर अपने कार्यमें लीन हो गये। तभी मुझे पुन्डलीकका स्मरण हो आया। ये अंगनू भगत हाजीपुर गांवके हरिजन भाअी हैं। अिनके पास ८-१० बीघे जमीन है और प्राणी हैं १० या १२। अपने गांवमें जो अत्यन्त सराहनीय कार्य अिन्होंने किया है, वह यह कि स्वयं अपने बल-बूते पर गांवके बच्चोंके लिअे अेक सुन्दर पाठशाला बनाअी; न गांवसे सहायता ली, न सरकारसे; न और मजदूर लगाये। आवश्यक साधन अपने पैसेसे जुटाये और अपने व्यक्तिगत श्रम तथा परिवारवालोंकी सहायतासे पूरी पाठशाला तैयार कर डाली।

सचमुच अिन हरिजन बंधुका यह अुत्साह हम सबको बड़ी प्रेरणा देनेवाला है। बड़े-बड़े पूंजीपतियों द्वारा बनाअी गअी भव्य अिमारतोंकी अपेक्षा श्री अंगनू भगत द्वारा निर्मित यह छोटी पाठशाला लाखों गुना श्रेष्ठ है, अिसलिअे कि वह काम हृदयकी पूर्ण श्रद्धाके साथ और आत्मा अुंड़ेलकर किया गया है।

हम सब अपने अिन आदर्श भाअीसे सबक और प्रेरणा लें।

रामनिहोर

शराबबन्दी क्यों?

भारतन् कुमारप्पा

कीमत ०-१०-० डाकखर्च ०-४-०

भूदान-यज्ञ

विनोबा भावे

कीमत १-४-० डाकखर्च ०-६-०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-९

www.vinoba.in

जीवननिष्ठ विज्ञान

मनुष्यकी कलाके जितनी ही महत्त्वपूर्ण दूसरी प्रवृत्ति विज्ञान भी, जिससे कलाका घनिष्ठ सम्बन्ध है और जिस पर कला हमेशा आधार रखती है, कलाकी तरह गलत रास्ते पर चल रहा है और यह जरूरी है कि वह अुसे छोड़ दे।

शरीरमें फुफ्फुस और हृदयकी तरह कला और विज्ञान भी अेक-दूसरेसे जुड़े हुअे हैं, अिसलिअे अगर कोअी अेक बिगड़ जाय, तो दूसरा अपना काम बराबर नहीं कर सकता।

जिस तरह यद्यपि कलाका अर्थ सामान्यतः हर तरहकी भावानुभूतिका संप्रेषण है, लेकिन अुसके सीमित अर्थमें हम किसी वस्तुको कलाका नाम तब तक नहीं देते, जब तक कि जिन भावानुभूतियोंको संप्रेषित किया गया है, अुन्हें हम महत्त्वपूर्ण न मानते हों, अुसी तरह यद्यपि विज्ञानका अर्थ सामान्यतः किसी भी तरहके ज्ञानका संप्रेषण है, लेकिन अुसके सीमित अर्थमें हम विज्ञान अुसीको कहते हैं जो अैसे ज्ञानका संप्रेषण करे जिसे हम महत्त्वका मानते हैं।

और कला द्वारा संप्रेषित भावानुभूति और विज्ञान द्वारा संप्रेषित ज्ञान — अिन दोनोंके महत्त्वकी मात्राका निश्चय किसी विशेष समयमें तत्कालीन समाजकी धर्मप्रतीति, यानी अुस समय अुस समाज-विशेषके लोगोंकी जीवनके ध्येयकी जो सामान्य कल्पना होती है, अुसके द्वारा होता है।

हमारे आजके वैज्ञानिक कहते हैं कि वे तो हर चीजका निष्पक्षतापूर्वक अध्ययन करते हैं। लेकिन हर चीजका अध्ययन शक्य नहीं है, क्योंकि अुसके विस्तारका अंत नहीं है। अिसलिअे यह तो अेक सैद्धान्तिक कथन-मात्र है। व्यवहारमें न तो वे हर चीजका अध्ययन करते हैं और न यह अध्ययन निष्पक्ष होता है। अध्ययन केवल अुसका होता है जिसकी, जो लोग अिस काममें नियोजित हैं, अुन्हें सबसे ज्यादा जरूरत है और जो अुन्हें सबसे ज्यादा रुचती है। और अूपरी वर्गके वे लोग जो विज्ञानके काममें संलग्न हैं, जिस बातकी सबसे ज्यादा जरूरत महसूस करते हैं, वह है अुस समाज-व्यवस्थाकी रक्षा जिसमें रहते हुअे वे अपने विशेषाधिकारोंका अुपभोग कर रहे हैं; और अुन्हें वही चीज सबसे ज्यादा भाती है, जो अुनके निरर्थक कुतूहलका समाधान करे, बहुत ज्यादा मानसिक श्रम न मांगे, और जिसका कुछ व्यावहारिक अुपयोग हो सके।

यही कारण है कि विज्ञानका अेक हिस्सा, जिसमें मौजूदा व्यवस्थाके अनुरूप बनाया हुआ धर्म-तत्त्व, दर्शन और अिसी कोटिका अर्थशास्त्र और अितिहास शामिल है, आजे मुख्यतः यह सिद्ध करनेमें लगा हुआ है कि मौजूदा व्यवस्था ही वह व्यवस्था है जिसे सदा कायम रहना चाहिये, और यह कि वह जिन नियमोंके फलस्वरूप पैदा हुअी है और आज चल रही है, वे अकाट्य हैं, हमारी अिच्छा-अनिच्छाके परे हैं और अिसलिअे अुसे बदलनेकी कोशिश करना हानिकारी और गलत है। दूसरा हिस्सा, यानी प्रायोगिक विज्ञान, जिसमें गणित, खगोल, रसायन, पदार्थ-विज्ञान, वनस्पति-शास्त्र तथा और दूसरे भौतिक विज्ञान शामिल हैं, अुन चीजोंमें अुलझा हुआ है, जिनका मनुष्य-जीवनके अुद्देश्यसे कोअी सीधा सम्बन्ध नहीं है, जो केवल कुतूहलकी तृप्ति करती हैं, या जिनका अूपरी वर्गोंके लोगोंके लाभार्थ व्यावहारिक अुपयोग किया जा सकता है। और हमारे आजके वैज्ञानिकोंने (समाजमें अुनकी स्थितिकी रक्षामें सहायक) जिन चीजोंको अपने अध्ययनके लिअे चुना है, अुनकी अुपयुक्तता सिद्ध करनेके लिअे 'कलाके लिअे कला' की तरह 'विज्ञानके लिअे विज्ञान' का वाद खोज निकाला है।

जिस तरह 'कलाके लिअे कला' — वादसे अैसा मालूम होता है कि जिन सारी वस्तुओंमें हमें आनन्द मिलता है, अुनमें पड़े रहना कला है, अुसी तरह 'विज्ञानके लिअे विज्ञान' — वादके अनुसार जिस विषयमें हमें दिलचस्पी हो, अैसे किसी भी विषयका अध्ययन विज्ञान है।

अिस तरह विज्ञानका अेक हिस्सा मनुष्यको अपना जीवन-हेतु पूर्ण करनेके लिअे किस तरह जीवन बिताना चाहिये, अिसका अध्ययन करनेकी बजाय यह बताता है कि हमारे आस-पासकी मौजूदा दूषित और झूठी जीवन-व्यवस्थायें सच्ची और अमिट हैं। और अुसका दूसरा हिस्सा, यानी प्रायोगिक विज्ञान या तो निरे कुतूहलके प्रश्नोंमें, या व्यवहारोपयोगी यंत्रोंके सुधार या खोजमें लगा हुआ है।

विज्ञानका अुक्त पहला हिस्सा हानिकारी है, कारण कि वह लोगोंमें बुद्धिभेद पैदा करता है, गलत निर्णय देता है; केवल अितना ही नहीं, अिसलिअे भी कि जो स्थान सच्चे विज्ञानको मिलना चाहिये था, अुस पर अुसने खुद अधिकार जमा रखा है। अुससे जो नुकसान होता है, वह यह है कि जीवनके सबसे महत्त्व-पूर्ण प्रश्नोंका अध्ययन करनेके लिअे पहले हरअेक व्यक्तिको अिन प्रश्नोंके आसपास युगोंसे जो झूठका परकोटा खड़ा किया हुआ है और मनुष्यकी सारी चतुराअी लगाकर जिसे बल पहुंचाया जाता है, अुसे तोड़नेकी मेहनत करना पड़ती है।

विज्ञानका दूसरा हिस्सा, जिसका आधुनिक विज्ञानको बड़ा गर्व है और जिसको कअी लोग असली विज्ञान मानते हैं, अिसलिअे हानिकारी है कि अेक तो वह हमारा ध्यान सचमुच महत्त्वपूर्ण विषयोंसे हटाकर तुच्छ और अुपेक्षणीय विषयोंकी ओर ले जाता है, और दूसरे, मौजूदा समाज-व्यवस्थामें — जिसे विज्ञानका पहला हिस्सा अुपयुक्त सिद्ध करता है और अपना समर्थन देता है — यंत्रविज्ञानकी कामयाबियोंका अधिकांश मनुष्य-समाजका लाभ करनेमें नहीं बल्कि अुसका नुकसान करनेमें काम आता है।

परन्तु सच्चा विज्ञान — जो अुस सम्मानका सही अधिकारी है जिसका दावा अभी विज्ञानके अेक सबसे कम महत्त्वपूर्ण अंशके अनुयायी करते हैं — अैसा बिलकुल नहीं है। सच्चा विज्ञान यह जाननेमें है कि हमें क्या मानना चाहिये और क्या नहीं मानना चाहिये, मनुष्यके सामाजिक जीवनकी रचना कैसी होनी चाहिये और कैसी नहीं होनी चाहिये, स्त्री-पुरुष-सम्बन्धकी मर्यादायें क्या हैं, बालकोंकी शिक्षा कैसी होनी चाहिये, जमीनका अुपयोग किस तरह करना चाहिये, दूसरोंको कोअी कष्ट दिये बिना अुसकी खेती खुद कैसे करना, विदेशियोंसे कैसा व्यवहार रखना, पशुओंसे कैसे बरतना, और अिसी तरहकी मनुष्य-जीवनके लिअे महत्त्वपूर्ण दूसरी अनेक बातें।

सच्चा विज्ञान हमेशा अैसा रहा है, और अुसे अैसा ही होना चाहिये। हमारे युगमें भी अैसा विज्ञान बराबर बन रहा है, लेकिन अेक तो मौजूदा समाज-व्यवस्थाका पक्ष लेनेवाले सारे वैज्ञानिक अिस सच्चे विज्ञानका अिन्कार और खण्डन करते हैं, और दूसरी तरफ, जो लोग प्रायोगिक विज्ञानमें मुबतिला हैं, वे अुसे अशास्त्रीय, अनावश्यक और अर्थहीन बताते हैं।

हमारे युगमें लोगोंकी बहुत बड़ी संख्याको अच्छी और पूरी खुराक (अुसी तरह घर और वस्त्र और जीवनकी दूसरी कअी प्राथमिक आवश्यकतायें) नहीं मिलती। और अुन लोगोंको लाचारीमें लगातार अपनी शक्तिसे ज्यादा मेहनत करना पड़ती है जिससे अुनके हितकी हानि होती है। आपसी संघर्ष, निरर्थक अैश-आराम

www.vinoba.in

और धनका अन्यायपूर्ण बंटवारा नाबूद करके — संक्षेपमें आजकी झूठी और हानिकर व्यवस्था हटाकर अिसकी जगह दूसरी मनुष्योचित और सही व्यवस्था कायम करके अिन दोनों बुराअियोंको आसानीसे दूर किया जा सकता है। लेकिन विज्ञान तो मौजूदा व्यवस्थाको ग्रहोंकी गतिकी तरह अचल मानता है और अिसलिअे अैसी धारणा बनाकर चलता है कि विज्ञानका अुद्देश्य अिस व्यवस्थाको असत्य बतानेका और नयी न्यायपूर्ण जीवनपद्धतिकी रचनाका नहीं, बल्कि मौजूदा व्यवस्थाको कायम रखते हुअे सबको खुराक देने, और सबको शासक-वर्गकी तरह आलसी बनने और भ्रष्ट जीवन बितानेकी सुविधा कर देनेका है।

धन और मजदूरीका मौजूदा दूषित बंटवारा कायम रखना और अुसे कायम रखते हुअे अैसे साधनोंकी शोध करना, जिनसे लोग रसायन-विद्याकी मददसे तैयार की हुअी खुराक खाकर हृष्ट-पुष्ट रहें और प्राकृतिक शक्तियोंसे अपना काम करवायें, वैसा ही है जैसा कि किसी आदमीको खराब हवावाली बंद कोठरीमें बन्द रखना, और फिर अुसके फेफड़ोंमें पम्पसे प्राणवायु डालनेका साधन ढूंढ़ना; जबकि अुस आदमीके लिअे जरूरत अिस बातकी है कि अुसे अुस बन्द कोठरीमें कैद न रखा जाय।

अगर विज्ञान गलत रास्ते पर न चल रहा होता, तो अितने गलत आदर्श ठहर ही न सकते।

आशा है कि कलाके विषयमें मैंने जो काम करनेका प्रयत्न किया है, वह विज्ञानके विषयमें भी किया जायगा, 'विज्ञानके लिअे विज्ञान' — वादकी असत्यता प्रगट की जायगी, अीसाअी धर्मकी शिक्षा, अुसके सच्चे अर्थमें, स्वीकार करनेकी आवश्यकता स्पष्टतापूर्वक बतायी जायगी, और अुस शिक्षाके आधार पर हमारे सारे ज्ञानका, जिसका हम बड़ा गर्व करते हैं, फिरसे मूल्यांकन किया जायगा। प्रायोगिक विज्ञानकी गौणता और तुच्छता तथा धार्मिक, नतिक और सामाजिक ज्ञानकी मुख्यता और महत्ता स्थापित की जायगी, और आजकी तरह अिस ज्ञानको अूपरी वर्गोंके मार्गदर्शन पर नहीं छोड़ा जायगा, बल्कि वह अुन सब स्वतंत्र और सत्यप्रेमी व्यक्तियोंके अध्ययनका विषय बनेगा जिन्होंने अूपरी वर्गोंसे सहमत रहकर नहीं, विरुद्ध रहकर, सच्चे जीवन-विज्ञानको हमेशा बढ़ाया है।*

(अंग्रेजीसे) **लीओ टॉल्स्टॉय**

* टॉल्स्टॉयकी What is Art? पुस्तकके २० वें अध्यायसे संक्षिप्त।

भावी भारतकी अेक तसवीर

[दूसरी आवृत्ति]

किशोरलाल मशरूवाला

कीमत १–०–० डाकखर्च ०–४–०

विवेक और साधना

लेखक : **केदारनाथ**

संपादक

किशोरलाल मशरूवाला : रमणीकलाल मोदी

कीमत ४–०–० डाकखर्च १-२-०

अुस पारके पड़ोसी

[पूर्व अफ्रीकाके प्रवासका रोचक वर्णन]

काका कालेलकर

कीमत ३–८–० डाकखर्च ०–१०–०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – ९

विज्ञापनोंकी आयका लोभ

अेक भाअीने अहमदाबाद म्युनिसिपल बस सर्विसका टिकिट बताकर अुसके पीछे छपा बीड़ीका विज्ञापन देखनेको कहा और प्रश्न किया कि क्या हमारी सरकारी और अर्ध-सरकारी संस्थायें भी समाजहितकी दृष्टिसे आपत्तिजनक और नुकसानदेह कही जा सकनेवाली चीजोंके विज्ञापनका लोभ नहीं छोड़ सकतीं?

अिन भाअीका प्रश्न बिलकुल सही है। मैंने अुनसे कहा कि आपको अपना यह विचार अिस विभागसे सम्बन्ध रखनेवाले अधिकारीको लिख भेजना चाहिये।

आज विज्ञापन अेक प्रकारका धन्धा ही बन गया है। अुससे आय होती है और अुस पर खर्च करनेवाले लोग अैसा मानते हैं कि विज्ञापनसे अुनके ग्राहक बढ़ते हैं। अिस तरह 'परस्परं भावयन्तः' विज्ञापन देनेवाले और लेनेवाले यह मानते हैं कि अिससे धनकी प्राप्तिका श्रेय अुन्हें मिलता है। विज्ञापन प्राप्त करनेका धन्धा करनेवाले और अुन्हें आकर्षक रूपमें लिखने और चित्रित करनेवाले लोग भी होते हैं। विज्ञापनके भी शास्त्र और मनोविज्ञानका विकास हुआ है। अिस प्रकार विज्ञापनका धन्धा आज सभ्य समाजमें अेक बला ही बन गया है।

लेकिन विज्ञापनोंके सम्बन्धमें सरकारी या सार्वजनिक संस्थाओंका केवल मुनाफेकी दृष्टिसे ही काम करना क्या ठीक है? टिकिटोंके पीछे सरकार अुन्हीं चीजोंका प्रचार क्यों नहीं करती, जो लोगोंमें चलाने जैसी या अुन्हें कहने जैसी हों? अुस जगह विज्ञापन देकर सरकार स्वच्छता, स्वास्थ्य वगैरा कल्याणकारी बातोंके प्रचारका काम क्यों न करे? अगर अैसा न करे तो फिर बस-सर्विस सरकारी हो या खानगी हो — दोनोंमें भेद क्या? अगर सरकारी विभाग भी हर तरहसे नफे-नुकसान पर ही नजर रखे और खानगी व्यापारीकी तरह ही काम करे, तो किसी विभागको सरकारी बनानेमें जो लाभ है, वह कहां रह जाता है? प्रस्तुत अुदाहरण पर विचार करें तो बीड़ी-तम्बाकू जैसी हानिकारक चीजोंको सरकार क्यों बढ़ावा दे? अिसे कैसे अुचित ठहराया जा सकता है?

सरकारी संस्थाओंको तो विज्ञापनोंके बारेमें विवेकबुद्धिसे काम लेना ही चाहिये। लेकिन दुःखकी बात तो यह है कि अैसी आपत्तिजनक और हानिकारक चीजोंके विज्ञापनका पैसा लोग ज्यादा देते हैं, जिससे लालच पैदा होती है। फिर भी सरकार और सार्वजनिक संस्थाओंको तो यह लालच छोड़नी ही चाहिये।

२६–११–'५३ **मगनभाअी देसाअी**

(गुजरातीसे)

विषय-सूची

		पृष्ठ
युद्ध और विज्ञान	मगनभाअी देसाअी	३१३
आजके तीन आवश्यक गुण	विनोबा	३१४
भूदान-प्राप्ति	कृष्णराज मेहता	३१५
पाकिस्तानका अिस्लामी गणतंत्र	मगनभाअी देसाअी	३१६
शराबबंदी और सरकार — ३	स्वामी आनन्द	३१७
जीवननिष्ठ विज्ञान	लीओ टॉल्स्टॉय	३१९
विज्ञापनोंकी आयका लोभ	मगनभाअी देसाअी	३२०
टिप्पणी :		
पुरुषार्थी श्री अंगनू भगत	रामनिहोर	३१८

www.vinoba.in